

निवेदन के आसू

‘वातागम’ हिन्दी मासिक
५. दृगा त्रिहिंग, बीकानेर

श्री शंभूदयाल सकसेना



नवयुग ग्रन्थ कुटीर

बीकानेर

प्रकाशक :
नवयुग ग्रन्थ कुटीर,
बीकानेर

प्रथम संस्करण :
सन् १९६३

मूल्य
पाँच रुपया

आवरण शिल्पी :
मोहनसिंह 'मधुप'

मुद्रक :
एजुकेशनल प्रेस,
बीकानेर

रुद्रात्मकथन

उपन्यास, नाटक, कहानी, एकांकी, कविता सबसे भिन्न इस रचना को पाठकों के हाथ में देने की बात अभी सोची ही नहीं थी। यत्र तत्र अकित इन भाव-कणों को एकत्र कर ग्रन्थ के रूप में सकलित करने की प्रेरणा उस समय हुई जब किसी एक संग्रह के लिए गद्य गीतों की मांग एक मित्र के द्वारा आई। उन्हें कुछेक अंश भेजे गये और उसी की प्रतिलिपि को इस सकलन के आविष्ट पृष्ठ मानकर चयन राय आरम्भ कर दिया। इस प्रकार इसका क्षेत्र बढ़कर विस्तृत विशाल हो गया। यहां तब कि इस ग्रन्थ के आकार में भी उसकी परिसमाप्ति असंभव दीखने लगी। इसे इसके प्रस्तुत रूप में पूर्ण मानकर शेष को किसी आगामी प्रकाशन के लिए सुरक्षित रखकर ही सतोष करना पड़ा। यह है इस के जन्म का इतिहास।

इसी प्रकार इसके रचनाकाल को भी किसी एक समय की शृंखला में विजडित नहीं किया जा सकता, न उसे तिथिक्रम के बंधन में ही बांधा जा सकता है। अनुक्रम, व्यक्तिक्रम, विषयक्रम जैसा कोई क्रम भी इसके सकलन में नहीं रखा गया है। इसके स्फुट विचारकणों और भाव तरंगों में समग्र व्यक्तित्व की लोज किये बिना ही इसका पारायण करने के बाद कोई सदेश या निदेश पाठक का मिल सकेगा यह आशा और विश्वास होने पर ही इसके प्रकाशन का विचार स्थिर किया गया। किंचित् रुचि के साथ इसका अवलोकन करनेवाले को किसी सीमा तक

संतोष और आनन्द अवश्य प्राप्त होगा, ऐसी आशा
दुराशा न होनी चाहिए ।

अन्तःसलिला की अविच्छिन्न धारा में से जहाँ-तहाँ से
धूलू भर भर कर उलीचा गया यह रस अन्ततः उससे
भिन्न नहीं है उस गंगा का ही यह गंगाजल है और
उसके माहात्म्य, गौरव एवं पवित्रता से तबनुरूप ही
श्रोतप्रोत है । लेखक के पास इस सम्बन्ध में केवल
इतना ही बन्ध है । इसके साहित्यिक मूल्यांकन का
कार्य या तो समालोचना का है या लोकमानस का ।
यद्यपि कभी कभी समालोचना का वही निष्पत्ति नहीं
होता जो लोकानुरंजन का । दोनों अभिमत जहाँ एक
हो जाते हैं वहीं साहित्य की अमूल्य निधि के सृजन का
सम्मान मिलता है । उस सौभाग्य की कामना तो सभी
करते हैं पर नसीब होता है वह विरलों को ही ।

बीकानेर
५-१२-६२

श. द. सकसेना



निवेदन के आंसू

० केवल एक ही अभिमान की वस्तु है मेरे पास,
वह है निश्चल प्यार ।

- सपासील रहस्य-संकेत एक पहुँचने के लिए शब्द ही एकमात्र सहारा है ।

निवेदन के आंसू

जीवन के पवित्र क्षणों में प्रकार की स्वर्ण-रेख को सहेजकर मुझे
 न्य हो लेने दो, स्वामिन् ! पर्जन्य की धूमिल छाया के लिए आकाश में
 पर्याप्त अवकाश है ।



तुम्हारी टुपा-बोर का भिक्षुक वैभव की भीख से अपनी भोली नहीं भरेगा । उसे इसका अधिकार भी तो नहीं है ।



मेरे अधरो पर मधु सूत रहा है मेरे मत्त मधुप ! अनुरोध की
 रेशमडोर धामकर चले आओ न,— वस अर्ध निमेष के लिए ।



)

तुम्हारे प्रणय मंदिर में अनास्था देवी की प्रतिमा प्रतिष्ठित हुए अभी कुछ ही पहर बीते हैं। जपासको की भीड़ से पूर्व एक बार इधर देख तो लो मेरे नाथ !



मेरी बरोनियो मे उदमकर स्वप्न बुम्हला गये है, उन्हे अपन सुम्बन
की उप समीर से लहलहा दो न मेरे प्राण !



वे मेरी अतृप्त अभिलाषाओं के स्वप्न दृष्टा है । उनसे मेरी हृदय-वीणा का तार मिला हुआ है । युगों का अवकाश हमारे बीच में खड़ा नहीं हो सकता ।— सच जानना देश की दूरी की कहानी सर्वथा कल्पित है ।



मेरी शिशु कल्पना में यौवन के पल बिसने लगा दिय ? मेरी
 अबोध भावना-हमिनी को घासती बिररणा की दोला में भुलानेवाला कौन
 है ?

इन प्रश्नों के उत्तर में दक्षिण समीर की सिसवारिया भर सुन
 पडती हैं ।



अन्तर की आधी से आज बाहर के तूफान का मिलन हुआ है।
भूकंप से महाप्रलय का सीहार्द-प्रदर्शन कोई अनहोनी घटना तो नहीं है।



मरे प्रयुक्त विराट् ! प्रतीची के घागा मे तुम्ह जगान के लिए प्रभाती
गाई जा रही हे ।

उठो, उठकर इस भव्य समारोह का समुचित सत्कार करो ।



यामिनी के पिछले पहर में फूलों की सेज पर मन मसोसकर तुम अकेली पड़ी हो। सुमुखि ! यह हिमालय से पृथुल और वज्र से भी कठोर दुर्भाग्य तुम्हारे सुकुमार शरीर से इतनी ममता क्यों रखता है ?



यह कैसा सगीत है जो अगु-अगु में और बग-बग में जहरा रहा है ? इससे अस्पाण्ड का रोमरोम भट्टत है । जीवन का तुमुल बोताहल इसकी पहली 'सरगम' है । गृष्ट का यह बीज बिछुतगारा की भाति सर्वत्र व्याप्त है । तुम मानों या न मानों तुम्हारे वणं कुहर इससे अपरिचित नहीं हैं ।



अभिलाषाओं की सेज पर तुम्हारा सौभाग्य नहीं जागा । तुमने जीवन पर्यन्त इस क्षिप्रिल कबरी का भार मान डोया है । हृदय में साधो का ससार लिए तुम समन-ममारोहो में सिसकती खड़ी रही हो । किसी ने तुम्हारी साज-सज्जा का समादर नहीं किया । तुम्हारे अघरो पर मधु सूखकर स्याह पड़ गया, तुम्हारे रेशमी केशो की स्निग्धता रुक्षता में परिणत हो गई । आर्यो ! बोलो, तुम्हारे लिए क्या करूँ— मैं एक जराजीरा ककाल ।



विसके हृदय की वशी में प्रेम की यह मधुर रागिनी अचानक बज उठी है, नीरव रजनी के निरभ्र आकाश-तले ?

व्योत्सनों शबनम की बूंदों में डुलक रही है। सरिता के दोनों किनारे दो भुजाओं में नदी की वृक्ष धारा को लपेट लेने के लिए आतुर हो रहे हैं। अपने दून्य कक्ष के भरोसे में तडप तडपकर रह जाती हैं।



तुम्हें कुलीनता का शाल ओढकर चलने का अधिकार किसने दिया ?
 यह अधिकार तुम कब तक भोग सकोगे ?

ठहरो, एक क्षण सोचो । आगे बड़ा वीहड़ पय है ।



आसुओं से गीले पथ पर चलकर आने का आग्रह कैसे करूँ ? मेरे हृदयमंदिर के देवता ! तुम तब तक अपने आसन पर ही विराजमान रहो जब तक मैं सासो का स्वर्ण रथ तुम्हें लाने के लिए न भेज दूँ ।



उपा स्वर्ण किरणों के बन्दनवार लिए प्राची के द्वार का श्रृंगार कर रही है। लहरिया मलय समीर की कटि से लिपटकर एक अनाहूत नृत्य की सृष्टि में रत होने वाली हैं। विश्व का यह विराट् ध्यापार जिनके भव्य स्वागत समारोह का मंगलोपकरण बना है, हाय ! उन महिमामय सर्वेश्वर के चरणों में अर्पित करने के लिए आज मैं निष्कलुप पावन हृदय कहां से लाऊँ ? जीवन-सध्या के झरोखे में कातर-कपित कठ से मैं सिसक रही हूँ।



अरे, ऐसा मत कहो कि उन्होंने अपना स्वणरथ मार्ग में रोक रखा है और मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मैं साधनहीन अकिंचन, उनके चरणों तक मेरा मस्तक भला कैसे पहुँचेगा ?



यह मेरे उनके बीच की बात है। इसने गोपन रहस्य को केवल हम दोनो ही जानते हैं।— और यह कि, यह सदा रहस्य ही बना रहेगा।



मेरा स्मृति मंदिर प्रतिमा विहीन है । अनूठे शिल्पविद्यान का स्वामी
 ऐसा शिल्पी कहा है जो मेरे स्वप्नो से उस मूर्ति को आकार प्रदान कर
 सके ।



वे आकाश में हैं और मैं धरती पर। कोई ऐसा आधार मिले जिसका सहारा लेकर मैं उन तक पहुँच सकूँ, उनके दर्शन से मन प्राण जुड़ा सकूँ।

धरती और आकाश का मिलन सध्य जगत में एक मिथ्या विचार -
है।



१२



गगन, तुम्हे विस्तार मिला, व्यापक विस्तार, न जिसका ओर न छोर । किन्तु तुम्हे उस केन्द्र का ज्ञान नहीं जिसमें तुम जैसे असह्य समाये हैं ।— ओर वह बिन्दु, वह आलोकपुंज, उसके रूपदर्शन का पार नहीं । उसमें सब कुछ उद्भासित, सब कुछ स्पष्ट, रोम रोम रत्ती रत्ती !



मेरे मनोरथो का रथ तुम्हारे पीछे पीछे गया । तुम्हारे मंदिर के तोरण तक । किन्तु तुमने गुडकर न देखा और द्वार बंद कर लिये ।

तुम्हारा निदेश हो तो उसे लौटा ले जाऊँ अथवा अनन्तकाल तक यही खडे खडे प्रतीक्षा करने दूँ ?



हृदय के अन्तरंग, तुम्हें अपने ऊपर विश्वास है, तुम निश्चयपूर्वक कह सकते हो कि उनके मन के किसी कोने में मेरा स्थान नहीं है ?

शायद नहीं, यह शायद ही मेरी आशाओं के कठ को चींच रहा सोमरस है ।



हृदय के अन्तरंग, तुम्हे अपने ऊपर विश्वास है, तुम निश्चयपूर्वक कह सकते हो कि उनके मन के किसी कोने में मेरा स्थान नहीं है ?

शायद नहीं, यह सशय ही मेरी आशाओं के कठ को सींच रहा सोमरस है ।



हृदय के किस कोने में तुम बसते हो ?

किस मार्ग से तुम बिना बुलाये मेरे सपनों में आ जाते हो ?

मेरी आँखें तुम्हें जागृति में खोजती हैं, तब तुम सुषुप्ति में छाये रहते हो ।

तुम हो इतना तो आभास होता है पर कहाँ हो यह निश्चय नहीं हो पाता ।

नहीं जानता उस पदों को कहाँ से उठाऊँ कि तुम सामने खड़े मिलो ।

तुम्हारा थोड़ा सा सकेत इतना बर सनता है कि तुम्हारे लिए भटवने के प्रयत्न का अन्त हो जाये ।



उसका स्नेहदान घूँघट के भीतर से, दृष्टिदान के रूप में, अज्ञानव मुझे मिल गया ।

इतने बड़े दान का अधिकारपत्र सौंपकर विजली की कौंध की तरफ बिना एहसान जताये वह चली गई, अपना बलस लिये बलखाती हुई पगडंडी पर ।

तब से हृदयवीणा के तार निरन्तर भनभना रहे हैं ।

आज दस वर्ष उपरान्त भी वह भकार शान्त नहीं हुई है ।



‘उसके पैरों में लाज का महावर लगा है । अकेली वह कैसे निकले ?’
 ‘सखियों के झुण्ड के साथ आये’ कह देना, ‘उन बँगनो की झुण्डकार
 मेरी पहचानी हुई है !’



वह मेरे द्वार पर आया है ।
 मैं उसे अपलक देखती रहना चाहती हूँ ।
 नये गीतों को मैंने उसके लिए नए स्वरो में गूथा है ।
 जवाकुसुमों को मोतियों के साथ पिरोया है ।
 मैं जानती थी वह आयेगा ।
 उसे मैं अपने गीता से एक बार विमुग्ध कर दूँ ।
 यह पुष्पहार उसे पहना पाऊँ, बस एक बार ।
 दक्षिण पवन की भाँति मेरा हृदय चंचल क्या हो रहा है ?
 धापाढ की सव्या सरीसी मेरी आँखें स्वप्नाविष्ट किसलिए हैं ?
 क्या वह बिना उपहार लिए चला जायेगा ?
 आज जब वह स्नय चतकर मेरे द्वार पर आया है ।



उनकी याद को मैं साथ लिए सो गई ।
 रात ने रात भर उसको रखवाली की ।
 सपनों ने मधु सौरभ से उसे सरसाया ।
 उसका नशा मेरे अग अग मे छा रहा है ।
 उसका सिरहन भरा स्पर्श मेरे रोम रोम को पुलकित कर गया है ।
 कह देना, उसके प्रेम के वातावरण मे मेरा सीभाग्य जन जन के डह
 का कारण बन रहा है ।



प्रेयसि, अपने आंसुओं मे मुझे मत बांधो ।
 मुझे वसन्त के उपवन का मुक्त पवन बना रहने दो ।
 नदी के एकांत कछार में निःस्वन संगीत मुझे बुला रहा है ।
 छन्दहीन कविता का उद्भ्रान्त प्रवाह मुझे साय चलने का निमंत्रण दे
 रहा है ।
 प्रेयसि, आंसुओं की रेशमडोर से मुझे बंदी न बनाओ ।



सखि, मैं वैसी अभागी हूँ !

वह आता है तो मैं उससे रोधे गही बोलती ।

वह हृदय में दद लिए चना जाता है ।

उसका मन जब आने को नहीं करता तो मेरे मन की शक्ति छो जाती है ।

सब कुछ खोया खोया, लुटा लुटा सा लगता है ।

मैं आसों में आसू भरे वास के कुज के पीछे जा बैठती हूँ ।

उसकी प्रतीक्षा में दिन बीत जाता है, सध्या धूमिल पड जाती है, रात भीग जाती है ।

मेरी उनीदी आल खव जाती है परन्तु कोई नहीं आता ।

उसका हृदय पसीजता है, अपमान और उपेक्षा भूलकर वह फिर चला आता है ।

उस समय बैरी मान फिर जाग उठता है ।

मैं बच बठोर व्यवहार से उसे खिन्ना देती हूँ ।

वह गही जानता मैं क्यों वैसा करती हूँ ।

मैं स्वयं नहीं जानती मैं क्यों वैसा करती हूँ ।

सखि, मैं राचमुच अभागी हूँ !



出 丁 午 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時

庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時

庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時

庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時

庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時

庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時 庚 申 日 庚 申 時



प्रियतम, तुम्हारे शिथिल आलिंगन मे मैं छटपटा उठती हूँ ।
 मैं तो तुम्हारे उन्मत्त प्रेम की अधिवारिणी हूँ ।
 तुम किसी को कुछ दो, मुझे आपत्ति नहीं ।
 पर मुझे वह दो जो किसी को न दो ।
 मेरे अतुलनीय समर्पण का प्रतिदान तुम्हारे प्रेम के एवाधिना
 हवा रखता है ।

तुम छत पर खड़ी बेणी को मुलभा रही हो ।

तुम्हारा मान तिरियल पड गया हो तो थोडा सा सबेरा पर्याप्त हो ।

तुम्हारा मात हमारे बीच में बाधा डालता रहे, यह भी कोई बात है ।

तुम्हारा हृदय जितना ही सुन्दर है मान उतना ही मुटिल है ।

तुम छत पर खड़ी बेणी को मुलभा रही हो ।

हमारे प्रेम को अपने मात के साथ बयो उतभाये रहती हो, सु

तुम छत पर खड़ी बेणी को मुलभा रही हो ।

तुम्हारा मान झिझिल पड गया हो तो थोडा मा सनेत पर्याप्त होगा ।

तुम्हारा मान हमारे बीच मे बाधा डालता रहे, यह भी कोई बात है ?

तुम्हारा हृदय जितना ही सुन्दर है मान उतना ही मुटिल है ।

तुम छत पर खड़ी बेणी को मुलभा रही हो ।

हमारे प्रेम को अपने मान के साथ क्यों उलभाये रहती हो, सुमृगि ?



घोस बहा, ये तो रात के आगू हैं ।

आखिर अरण-करो को उन्हे पोछने के लिए घाना ही पड़ेगा ।

तुम हो, जो रात के उपरान्त भी मेरे आगू पोछने की दरवार नहीं
समझते ।



सुमुखि, तुम्हारे मुख की भाषा मैं नहीं जानता हूँ ।
 विन्तु तुम्हारे मन की भाषा से मुझे अपरिचय नहीं है ।
 तुम बोलती हो वह मैं नहीं समझ पाता ।
 तुम चाहती हो वह सब मुझे ज्ञात है ।
 मेरी रानी, मेरी चहेती, तुम भले ही परदेशिन हो ।
 तुम्हारी आत्मा का संगीत मेरे अन्तर का उद्वेग है ।



तुम्हारे इन चित्रों में कोई उन्मादक रमणीयता है ।

मैं इन्हें देखता ही रह जाता हूँ ।

तुम पास नहीं होती हो तो भी दनसे मेरा मन बहला रहता है ।

यह तो मेरे मन की बात है ।

इसमें तुम्हें रुठने का प्रयोजन नहीं ।

तुम्हारे रंग में रंगी होने से ही इन आँखों में सौंदर्य का नशा ध्याया रहता है ।

उसी के कारण मैं इन चित्रों के आवरण में खोजता हूँ ।

ये तुम्हारे जह के नहीं प्रीति के उपकरण हैं ।

देसो, तुम इन्हें पाइ फेंकने की भूल कभी मत करना ।



मैं जागी तो नीलोत्पल मेरी खबरी में गूँथा हुआ था। पीतोत्पल मेरे
 कंधे में बँधा था और अग्नोत्पल मेरी पायल में भून रहा था। मैं पूछती
 हूँ, मेरे छलिया, तुमन ऐसा क्यों किया ? सारी रात तुम यही खेन करते
 रहे और फिर उठकर चले गये। मुझ अक्की को सोती छोड़ तुम चुपचाप
 चले गये, कभी न आने के लिए। तुम्हारी खीला की एसी एसी कितनी ही
 स्मृतियाँ मुझे खनान के लिए मेरे पास रह गई हैं। यही वह निधि है जिसे
 सूनी घडिया में मैं सहेज सहेजकर धरती हूँ। तुमने किस शत्रुता का धटना
 किया है मुझमें मैं नहीं जानती।



मेरा प्यार मेरा शत्रु बनकर जन्मा ।

उगने मेरे सन-मन के आवरण को हटा दिया है ।

मे नगी हो गई हूँ, बाहर से भी भीतर से भी ।

कोई परिधान, कोई व्यवधान नहीं रह गया है ।

अनावृत प्यार कितना बड़ा कनक होता है, यह मैं आज जान पाई हूँ ।

कुतवधुओं के शील-सौंदर्य का पथ मेरे लिए रुद्ध हो गया है ।

मेरे लालित्य-लावण्य केवल उसके नहीं रहे जिनके प्रति मैं जन्म

सन्मान्तर से समर्पित हूँ ।

वे जन जन के पीतुन का प्रवरण बन गये हैं ।

मैं आज अपनी भूत पर पद्धता रही हूँ ।



एक बार तुम यह देतीं, 'न जाओ' तो मैं कभी न जाता ।
 मैं तो यही चाहता था कि तुम मुझे रोव लेतीं ।
 तुम भी चाहती थी कि मैं रुक जाऊँ ।
 तुम्हारी लाज ने गिन्नु तुम्हारा मुँह न खुलने दिया ।
 विदा की बेला हम दोनों मूक बने रहे ।
 विद्योह हमारे बीच में शाश्वत दीवार बनकर सटा होगया ।
 रात बीतने पर चक्र-शव युगल का मिलन होता है ।
 हमारे विद्योह की रात परन्तु जीवन-व्यापिनी है ।
 हम दोनों के छोडे से सकोच ने हमें सदा के लिए विलग किया है ।



अपने मन के कमल-पत्र पर मेरे प्रेम रुपी ओसबिंदु को सेंभालकर
रख लो ।

लोक-चर्चा की हवा के भोवते की चिन्ता क्यों करती हो ?

सूर्य की उत्तम किरणें उसे पोंछ ले जाने की तैयारी में हैं ।

तुम तो चन्द्रकरीं पर निर्भर करो, वे कभी उसे बुझलाने न देंग ।

उसे सजल-सरस रखने में उनका बहुत बड़ा प्रयोजन है ।



मेरा प्रेम तुम्हारे लिए है ।
 मेरा नेम भी तुम्हारे लिए है ।
 मेरा धोम भी तुम्हारे ही लिए है ।
 मेरे तो तुम एक ही देवता हो ।
 किसी और को मैं नहीं जानती ।
 तुम्हे पाने से ही मेरी तपस्या पूर्ण होगी ।
 हे अपूर्ण, तुम मेरे सर्वस्व का अर्घ्य स्वीकार करो ।



ताम्बूल ने तुम्हारे अघरो का मधु चम्पा है ।

मेहदो ने तुम्हारे कर-पल्लवों की ऊष्मा हरण की है ।

महावर ने तुम्हारे पद-गन्धो की लाली चुराई है ।

अनाघ्रात, अपीडित और अछूता क्या बचा है तुम्हारे पास, जो लेकर तुम उसे अर्पित करने जा रही हो ? वह क्या इगी उच्छिष्ट का भिखारी है ? तुम उससे छल वरके विग पुण्य प्राप्ति की भासा रखती हो, वृसोदरि !



तुम किस विजन में छिपकर यशो यजाते हो ?

मेरे मन के निकुंज में भाकर बैठो न, मेर प्राण ।

मेरे हृदय का वृन्दावन वन से तुम्हारी राह देस रहा है ।

जमुना किनारे, बरीलवन के पार, तुम्हारी स्वर लहरी गूँज रही है ।

क्षितिज से उतर कर राध्या तमालों की छाया में बही खो गई है ।

मजरित बदम्यों की सुवास उसे तुम्हारे पास भाने ही नहीं देती ।



तुम मेरे हृदय की छोट में छिपे रहत हो ।
 मैं तुम्हारे वशी-रय में स्वर मिलाती हूँ ।
 तुम आँसुमिचीनी में मेरे मन की याद लेते हो ।
 मैं तुम्हारे हृदय की घड़वन में बसती हूँ ।
 तुम मेर प्यार की परिधि में समाय हो ।
 मैं तुम्हारे प्रणय की सीमान्त रेखा से बँधी रहती हूँ ।



दिन बुझ गया है, आकाश जन उठा है ।

यनात की भोजन म कोई मुस्वराती हुई किसी को बुला रही है ।

नदी तट के कुछ जगहों म पक्षियाँ न शांति का अपना पक्षी म समेट लिया है ।

आज की रात उसके जीवन की एकादशी का व्रत समाप्त होन को है ।

अब और दर मत करो चक्कर अपने हाथों स उस पारणा कराओ ।

ऐ अवगु ठनवती, उस श्रान्त तापस की भाग्यरेखाए तुम्हारे द्वारा ही लिखी जायेंगी ।



इन बातों ने मेरे मन में घाग लगा दी है।

कोयल के स्वर विष-सुभे बाणों जैसी मार कर रहे हैं।

घपनी निरहिली को तुम घपने उन गानों का आनंद समझा जाओ।

त्रिनयी मितन-राशिनी मे 'मगुर एकागत का रगदान' जैसा विषम

पा।

आकाश में दोड़ो मेंपो की कमर में निपटी मोसामिनी यही अनुरोध

कर रही है।

मेरी बेसी का बंधन निविम हो गया है, और तुम अभी तक नहीं

पट्टेय पादे हो।



मेशा सर्वस्व स्वप्न-धन भी मेरे पास बर्हा रहने पाया ?

तुम्हारे सिर को अपने बक्ष से लगाये मैं तुमसे बार्ते कर रही थी ।

मेरी आँखें बंद थी; मैं उन्मत्त भावों में विभोर थी ।

तुम बाराणा की लाली अर्पांग में लिये शाश्वत मिलन का आश्वासन दे रहे थे, और कह रहे थे, 'तनिक आंसे तो मिलाओ ।'

तुम्हारे अनुरोध को मानने से मेरे सपनों का संसार मुभसे छिन गया ।
मैं पलक मारते ही राजरानी से भित्तिारिणी हो गई ।



दुखी की ज़िंदा करवों को, पैगुदुखी की रोमती माया, विभाग नहीं मेरे दे ती है ।

बादों में जितनी स्वर्णमया का स्वप्ना भार हुआ बरों की मला किमकी पिन्दा होगी ।

जोभना रनात रज्जी के सपन में हरतिगार की सुप्तावति मूर प्रणव निवेशन है ।

बतो, ऐसे समय हम पर से निबान पायें । बावरी, तेरी आंगों में मात्र भरते हैं घोर उदका मन सपीर हो रहा है ।

तिह्यन भरी सँवेरी रात में केवदा की सात गो यह तेरी प्रतीक्षा कर वह करता रहेगा ? सत्यपूर्वक मूर्खी हुई सचुत-मान माय के धननी है, भून जाते न समयन के पते मेधा का भन बना रहता ।



सिप्रा के बिनारे आदि कवि के स्वप्न चट्टानों के रूप में जम गये हैं। कौच मिथुन का विद्योह करानेवाला अहेरी जाड़ी घोट में कहीं घर सघान किये सडा है। तू उधर मत जा मूलेक्षण, उस्तावानो तब प्रत्यचा खीच रखी है।

हृदय की गहा गुफा में मैंने तेरे लिए सुरक्षित शयानस्थ बना छोडा है। उसमें तू जगत की गीमाओ का बधन तोडकर आजा और तब तब विश्राम कर जब तब रात्रि का अन्ववार पीना नहीं पड जाता, जब तब हिमाशु की शीतल किरणों की भोर का प्रवाणबुहार नहीं ल जाता, जब तब ओसबिन्दुओं से उपा के कपोल विगलित नहीं हो जाते।



तू मुझे चुनागे घोर में न पाऊँ, ऐसा कभी हो सकता है ?

तेरी दाढ़मयी भुजाएँ पंजी हो घोर में तामें न बँध जाऊँ, ऐसा कभी हो सकता है ?

तेरे झोट जलते हों घोर में तू पर अनुगत का समूह न छिडूँ, ऐसा कभी हो सकता है ?

मैं मेरे मन की नहीं जानती, मेरे मन में तो मान अभिमान कुछ नहीं है ।

वह तो कभी का गन्धर्व पतिगोत्र के श्राद्ध में बह चुका है ।



हृदय के नीलाम्बर तले केवल एक ही प्रतिमा विराजमान है, वह है तेरी ।

असंख्यासंख्य रूपाकृतियों में से केवल तेरा ही चयन हुआ है, भाग्यशालिनी !

इस रहस्य-देश की राजधानी में मयूरसिंहासन की अधिकारिणी तुम्ही को माना गया है । परम्परागत रत्नाभरणों का परित्याग करके केवल नैसर्गिक सुपमा के साथ तू आ जा ।

कल्पना की तूलियां नूतन ढंग से सहस्रविध तेरा शृंगार करने को व्याकुल हैं ।

हृदयमन्दिरकी राजरानी, तू आ जा, एकपल का भी विलंब मत कर ।



मा के विग विभूत जोते में तुम यमो हो ?
 विग मागं से तुम भेरे म्दनों में सा जाी हो ?
 मेरी धामें तुम्हें जागृति में सोझती है ।
 तुम सुगुणि म प्राप्त रहो हो ।
 तुम हो श्याम तो सा-नाम होऊ है,
 पर क्या हो यह निश्चय नहीं हो पाता ।
 नहीं जागी उग परे जो बहाने म उदाऊँ कि तुम सामन गडे मियो ।
 घोर मेरी धामों में सागं सातकर पवित्र दृष्टि म सुभ पागये रणे ।



'मैं रुद्ध पय हूँ, मैं यजित प्रयोग हूँ', गहार अश्रुगित्त प्राणो मे तू
द्वार की ओट में जा सटी हुई ओर मैं अपना रोग निवेदन किय बिना ही
चना प्राया ।

दिन, मान, चप बीत गये । आज एक युग के बाद उस दिन की याद
मुझे फिर वहा लीच ले गई, जहां वसन्त गभीरण बैसा ही सौरभ स्नात है ।
जहां निरभ्र नीन आवाग का वितान बैसा ही टाग है, जहां अमराइया की
छाया मे पगडडी सपगति से चनकर गरसा के घेता में ली जाती है । जहा
रगबिरगी तितलियो स फूनो का गुपचुप अमाताप चनता है । जहा नदी की
धारा क्षीण किन्तु उसका बग तीव्र हो गया है ।

मैं वही जाकर ठिठक गया, जहा उम दिन तेरे रत्ताजटित कागगा की
भीठी स्नभुन ने मुझे बिह्वल कर दिया था । आज किन्तु बिवाडो के पीछे
किसी का बठस्वर सुनाई नहीं पडा, न रूडियो का मुग्गर गगीत, तो भी मेरे
कानो मे एव युग पूव के तेरे शब्द उसी तरह गूज रहे हैं । तेरी छनछनाई
प्राणो मे सैरती उस दिन की विवगता मेरे प्राणो को भरौट रही है ।



हे धर्म्य, तेरा कोई धाम-गाम नहीं ।

ये कहते हैं तू सातो मे दुवमो निमे है, पर बेचारी सांगो को कुछ
पुत्र हो तो बगारें ।

उनका अनुमान है कि तू मन-मानस के बमलवन मे दिपा है, घोर
व तेरी सोझ में बहा बहा गरी भटव साया ।

मय बलाने है कि तेरा निपास हृदय के किमी नि भूत कोने मे है, परन्तु
हां किमी के लिए भांपना दजिल है ।

हे परमस्वर, तू मानान की नक्षत्र-माता मे बहा दर्शन दे सके तो तेरा
पागव वृत्तदय हो जाय ।

तेरा मरल-मुकुट उपादान की विरली मे, पनामगुन के पारर मे,
पनभा उडे तो उमे तेरा मयान दिन जाय, घोर उगा उगाभ मिट
जाय ।



मैं उन्हें प्रतिदिन आते जाते देखता हूँ ।

घड़ी की छोटी मोटी गुर्र्या की तरह वे समय तो पढ़ानती हैं । मेरी आँखों में अपने रूप का अजन आजती हुई वे मेरी गिड़की के पास में निकल जाती हैं । जाते जाते एक भीचक दृष्टि फँकते जाना उनका स्वभाव हो गया है । मैं उस दृष्टि दान को निरोधार्य करने के लिए पहले से ही तैयार रहता हूँ ।

उन्हें मेरी कविता में कोई लगाव नहीं है । वे केवल मेरे मन के तारों को छेदने में आनन्द पाती हैं । उनकी आँखें मुरझाती हैं । उन्नी हसी सब कुछ कह देती है । इसने लिए मैं उन्हें उलाहना नहीं देता ।

उन्हें मैं प्रतिदिन आते जाते देखता हूँ ।

मेरी कविता का छद्म टूट जाता है । मेरी स्वर साधना भग हो जाती है । मैं उनके चञ्चल पैरों की थिरकन में विभी अनुरोध को रोज़े लगाता हूँ ।

क्या वे किसी दिन अपने मक्केतो का घू घट हटा देंगी, और अपने मन की गोपनीय अभिलाषा अपने कवि को जता देंगी ?

उस दिन मेरा काव्य अर्थ-भार से बोझिन हो जायगा । मैं उन्हें अपनी कविता के स्वर-छंदों में बाध लूँगा ।



मेरा कवि कभी सूझा नहीं होगा ।

पाद गूड़ा हो जाता है, चादनी पीसी पट जाती है, तारे कुम्हना जाते हैं और बिरसे भापर ऊँचे बुहार से जाती हैं, लेकिन मेरा कवि कभी गूड़ा नहीं होगा ।

बसन्त बूझा हो जाता है । विशामय मृग जाने है, पून मुरभा जात है, कवियों भट्ट जाती है बिन्दु मेरा कवि तमरा बना रटा है ।

त्रिषात गरग मेरे कवि के गीत कठ कठ से मदिरा डाना रहत हैं । बग बग में उगते काव्य का नशा छाया रहता है । उग धमर कवि की पत्रप्रवाही बाग्धारा के साथ मेरा प्रपनापा है । मैं उतकं यागी-व्यजन के स्वाद को पतपतपर घपता तारण्य ताजा रगतो हूँ ।

मेरा कवि कभी सूझा नहीं होगा । उगवे गीत कभी बागी नहीं होने । मैं उच कवि की स्नेहमता हूँ ।



आओ कवि, मैं तुम्हें अपनी चलको में गूँथ लूँ ।

आओ कवि, मैं तुम्हें अपनी पलको में छिपा लूँ ।

ओ प्रियवद, तुम इतने भीटे क्यों हो ?

तुम्हारी वाणी में मिठाग, तुम्हारे गीता में मिठाग, तुम्हारे भासुओं में भी मिठास !

तुम्हारे ललित लावण्य में मिसरी का सा स्वाद है ।

कवि, तुम इतने भीटे क्यों हो कि सभी तुम्ह पाने के लिए तकरार करते हैं ।

तुम घुरा न मानो तो मैं तुम्हें किसी ऐसी जगह छिपाऊँ जहाँ तुम सिर्फ मेरे ही रहो, मेरे अपने कवि !



मेरा बाध विर नूतन धीर पिर पुराता है ।

उगमे गुन गुन का बन्ना-विषया है ।

तेरे बन्-भित्तों पर चले किता कोई उग मन्दिर में कंसे पहुँच सकेगा ?

धीरन धीर मृष्टि का श्रेष्ठ धीर पुनीत जो वृद्ध हो गवता है यह
दगमे सज्जोया हुआ है ।

भाष-मीरवं के, भाषा भाषुयं के, प्रथम ग्योत की उपनधि के लिए
तुम्हें मेरे रास्ते घाना ही पड़ेगा ।

हर कुरवी में वाक्य-रत्नों से तुम्हारा साधारण होना । नव जागरण
के, विद्या ज्ञानिना के सदेशवाच्य बनने की प्रेरणा के लिए तुम्हें अपने इस
बलि के मार्ग दर्शन की दरबार होगी । विद्याल व्याप्त उमका वाक्य
विर नूतन धीर पिर पुराता है ।



हे धरेण्य, तुम मेरा गर्व खूँ कर दो ।
 मेरा मस्तक तुम्हारे पाद-प्रहार के आगे झुक जाये ।
 मैं उसे तुम्हारे प्रेम का उपहार मानकर ग्रहण कर सकूँ ।
 हे अभिराम, मैं तुम्हारी दशदृष्टि का अभिलाषी हूँ ।
 तुम मेरे दर्प को तीव्र व्यंग्य से छेद दो ।
 मैं तुम्हारा प्रसाद मान कर उसे गले लगा लूँ
 हे मनोज्ञ, मैं तुम्हारी ईपत् हास्यमयी मुस्कान से डरता हूँ ।
 ससके पीछे विपाद की करुण छाया मेरे मन में रुलाई जाती है ।
 मैं उसे लेकर क्या करूँगा; तुम्हारे ही चरणों में छोड़ कर चला
 जाऊँगा ।



घर, वहाँ मिलन के दाएँ बीत गये ?

विभोग द्वार पर घाबर गटगटा लगा है ।

बोर्डे उब सम-ना दों कि मैं विदाई का चुम्बन देते की उतानली कर
रही हूँ । मेरा बेस पि पास बिगरे गगा है । मरी साज सगना मसगोज गर्द
है । मैं उगू टोक कर लूँ घोर सपना प्रिय मे भेट कर विदा ले लूँ ।

विभोग द्वार पर घाबर गटगटा लगा है ।

मिलन के दाएँ सभी के बीत गये हैं !



वन-मयूर, आज तुम मेरे मन्दिर की चूटा पर मत बोलो । मेरा मन-मयूर विषाद के आगू बहाने लगता है ।

मन्दिर की चूटा पर से तुम्हारा वैचारक मेरे हृदय में भूती याद जगा देता है ।

मेरे सिञ्जित पग तुम्हारे नृत्य के माच बिरक उठने थे । मैं प्रिय की बाहो में समा जाती थी । वे श्रीचक मिलन कराने के लिए तुम्हारी प्रसन्नता करते थे । मैं लज्जा से प्रदोषप्रेता के रँग में रँग जाती थी ।

आज तुम मेरे मन्दिर की चूटा पर बोलकर मेरे मन को मत दुस्तापो ।



तूने मेरे हृदय-द्वार की मागत क्यों मटगटाई ?

मैं तो क्षणों में लीन बरसबर सी रही थी,

हृदय मेरी नींद गुन गई, मेरी मुग की नींद उठ गई ।

मैं हृदयदा कर द्वार खोल दिया किन्तु तूने यहाँ न पाया ।

तूने मेरे हृदय-द्वार की मागत क्यों बजाई ?

तूने पढ़ी दो पद्यों खना नहीं या तो मेरे मन की दान्ति को क्यों हर
लिया ? तूने दो बाँके ख्य विना ही खला जाना या तो बिनती-बिरोरी
के साथ मेरे सपनों में क्यों घासा ?

हृया का भीना दतना ठीक नहीं हो गकता जो दग प्रवार सागत पीठ
कर बना जाय । मेरे हृदय द्वार की मागत गढ़वाँभाना तेरे मिवा दूगरा
नहीं हो सनता ।

बता, तूने मेरे हृदय द्वार की मागत क्यों भनभगाई ?



जा भरा है सो तेरा है । जो मेरा नहीं है उगने लिए तू व्याकुल मत हो । उसके लिए व्याकुल होने में कोई लाभ नहीं है ।

मेरा मन, मेरा हृदय, मेरा प्यार तेरे चरणों में समर्पित हैं । हाड-चांग के इस तन पर मेरा अधिकार नहीं है ।

मणि-मुक्ता सब तेरे लिए है । गरल-सीपी के लिए तू लोभ मत कर ।

मेरी बात मान ले, मर आराध्य ! मेरे सर्वस्व का नैवेद्य तू भक्त्य भाव से ग्रहण कर ।



तू बड़े लो में उठे बसा तूँ कि तूने मेरे बानों में बसा मंगला की है ।

जिनका, नेरे ऐंगे ही कृप है । अब मुझे क्यों रोना रहा है ? मेरी

जिरीरी बरने से बसा हीगा ? मैं नेरी बातें उठे बसाये बिसा न रूँगी ।

घापाड की पहली पुहार ने सूखी दूध को हरा कर दिया है । बादलों

के बानों से लगी विद्युत् तारण पक्षियों के लोटे को वर्षा का मदेन दे रही है ।

तू बड़े लो में उठे बसा तूँ कि तूने मेरे बानों में बसा कहा है ?

तू पदमा रहा है कि तूने मेरे धामे धपना हृदय को गोता ?

धपना दर मत्र, मैं तेरी गोपनीयता का पर्दा नहीं उठाऊँगी । हमने

बरने से मुझे का देना होगा, जिनका तूने राज दिया था ।



कीतूहल भरे तेरे नयनों में अथाह रहस्य है । मैं उनमें दूबकर भी उसकी याह नहीं पाता ।

मुनोचने, क्या तू अपने नयनों की गहराई को धाएँ नहीं दे सकती ? शायद तेरा भी उस पर यश नहीं है ।

सागर में मोती और सीपी दोनों ही तिरने हैं । इमका पता उसे तभी चलता है जब गोताखोर उन्हें निवागव र तट पर उद्गाल देता है ।

कीतूहल भरे तेरे नयनों में अथाह रहस्य है । जगमें से मोती और सीपी का विवेच करना क्या सहज है ?



पापट घोर घमराई की इस निषिद्ध द्वाजा से न जाने कितनी निष्पत्तियाँ हैं ! प्रत्यक्ष ही में द्वापर पावन यज्ञों ही उपर धातुर हृदय संपन्न हो उठते हैं । पापट पर वैद्यों की मधुर भजनकार से घमराई की परछायाँ तनुन सुग्न करने लगती हैं । उगली मधुर विनयिताहट से उपर संकलय घोर कथिनी संशयमुग्र हो उठते हैं ।

दोपहर होने लगे पनपट घान्त घोर गूना हो जाता है । उम समय घमराई भी घबकर लो जाती है । जीवन के प्रभावशाल से लोनी वा दर व्यापार निरंतर चल रहा है ।

साज घमानन समे व्यापार देगवर घनिष्ट की घामना से दोनों का मन डोक उठा है । पनपट घमराई से पूछता है, घमराई पनपट का निजाता करती है, 'रात रात में यद्-वेदियों की यह दुनिया कहाँ जाती गई ?'

किन्तु कौी से कौई समाधान नहीं घाता ।



मुझे किसी अन्य के परिचय की आवश्यकता नहीं ।

तेरा मेरा परिचय ही काफी है । तेरे मेरे प्रेम की कथा कौन सी शुद्ध है ? क्या कभी वह चुब पाई है ? क्या कभी वह चुब पायेगी ? कान के असीम आवाज में आरवत नक्षत्रमानास की तरह वह ध्यात है ।

मैं तेरे-मेरे परिचय के बीच में बिग्री को आने देना नहीं चाहता । क्या किसी और के लिए स्थान ही उदा है ? हमारी छोटी सी दुनिया में कोई समायेगा ही कब ? तेरे मन में यह विचार ही क्यों आया, मेरे भ्रम पृथ्वी !



निजित प्रतीत किंगी प्यारी स्मृति से चापल है ।

घाज यह जीवन के शरणों में दुर्लभ हो गया है, फिर भी ऐसा सगता है जैसे यह तारों के साथ न टूटा हो बल्कि यहीं बहीं प्रीटामग्न हो ।

पुरातन, कभी न मोटनेवाला, यागावरण यतमान के हृदय को अनुरागभरी प्रामोदता से बिला रहा है । उमते किठती देर में बैसा नयनीत निबनेगा यह देखने के लिए मन विस्फारित नेत्रों में शिनित्र के उत प्रोर भांज रहा है, जहा निजित प्रतीत किंगी प्यारी स्मृति से चापल है ।



मेरे मृत्यु-गृहस्तं को इतना गगलमय बनाने का प्रयोजन तो बता दे ।

जन्म और जीवन को निरन्तर मिथ्या से अभिपिन्न करने रहार मृत्यु को महिमा से मद्धित करने में क्या आशय है, यह तेरे मित्रा कोई नहीं जानता ।

मेरे निवृत्त मृत्यु, जन्म और जीवन का एत गा मूल्य रहा है । जो रोता ही आया हो, रोता ही रहा हो और रोता ही जाता हो उसे इस समारोह के प्रति कोई राग नहीं हो सकता, वत्स ।

मैं अगद शांति व रय पर चढकर शेष यात्रा किया चाहता हूँ, तू अपने तमाम महोपकरण गभेट ले ।



अन्न समय मेरे शीर्षं धंवन मे कुछ भी तो नहीं है ।

सोपन का ऐन्दवं समाप्त हो चुका है ।

गोउ की चांदनी स्वरहीन हो गई है ।

गपनों की मणिमाला सिन्न होकर बिगड़ चुकी है ।

महंशाबांशा की स्वर्गाभा धपनी दिव्य थी तो बंदी है ।

प्रव विग मंगल-निराग के लिए मैं तरस रही हूँ ?

उगमें क्या सम्भोहन है ?

मेरे आनाहीन भविष्य की धलका मे विग मेघ-अदेश की प्रतीक्षा है ?

पर्यरात्रि के मन्नाटे में, समुद्रवेन की भाति, हिमपवन पगों की

सरगराहट व्ययं मेरा ध्यान घंटा रही है ।



तुम्हारे प्रति मेरे मन का लोभ तुम्हें दुर्लभ मानने को तैयार नहीं है ।
मन प्राणों में उलट आरथा जागृत्य है कि तुम कही भी रहो, मेरे लिए
सहज सम्य हो ।

तुम कितने ही धीरे गाओ, मेरे कानों में तुम्हारे गीत का स्वर पहुँच
जाता है । उस दुर्लभ दीवार को मेरे मन ने कभी नहीं माना है जो हम
दोनों के बीच में खड़ी बतायी जाती है ।

हे निरुपम, उस असीम दूरी के आचल में तुम्हारा अस्तित्व क्या
केवल मल्पनाजन्य है ? अब तब मेरा विश्वास क्या मरुमरीचिकाओं में ही
उलझा रहा है ?



तुम, छोड़ तुम, मेरी कुटिया के द्वार पर सघनक वहाँ से घा गये ?
कीन जानता था कि बिछी पूर्व मूषना के बिना मेरे स्वप्नो का गुहाग लेकर
तुम घा जायोग ?

बद द्वार के भीतर ही तुम्हारी पद-पाप की चाहट से मेरा हृदय
भनभना उठा । मुग उपाबाल की ससणाभा से पीत हो गया । मुताब की
पलुट्टियो ता मन महन उठा ।

मैंने जल्दी जल्दी सभ्य नैवेद्य जुटाया और सपने प्रवासी के सत्कार
हेतु कुटिया का द्वार उगमुक्त कर दिया । तुमने सपने हाग से मेरा सवगुंठन
हटाया और सज्जा से बापते, मेरे हायो का सभ्य स्वीकार किया । किन्तु
तुम्हारे मुक्त पर छाया गंसय दूर न हुआ और मुझे घुष्टनापूर्वक फिर से
सपना परिचय देना पड़ा ।

मेरी विडम्बना की सप्ता से मेरा हृदय विगलित हो रहा है !



इन सप्तपियों को अर्घ्य देकर वे प्रदोषवेला के उपरान्त मेरे पाहुने हुये थे। इस आकाशगंगा को साक्षी मानकर उन्होंने मेरी पवित्रता पर स्पर्श का कुंकुम छिड़वा था। तुम बताओ मैं किस भाति कलंकिनी हूँ ?

उनके निष्कलुप आर्त्तिगन में बँध जाना ही पाप हो तो दूसरी बात है। हृदय में इतना आनन्दोल्लास क्या किसी पाप का परिणाम हो सकता है ? इसमें दुराव-द्विपाव नहीं, इसमें भय-बाधा नहीं। यह तो मेरे जीवन का सबसे बड़ा सार्वजनिक समारोह रहा है। इसमें किसी तरह की दुर्गन्ध, किसी तरह की कालिमा नहीं है। मैं साँगन्द खाकर कह सकती हूँ। तुम मानों या न मानों; विश्वास करो या न करो। वे मेरे कृष्ण, मैं उनकी राधा !



तुम मेरे उनके परिचय की बात पूछते हो ?

मेरी उँगलियों में उनका स्पर्श ताजा है। मेरी हथेलिया उन्हें पहचानती हैं। इन कलाद्रवों, इन अगहाद्रवों, से उनका गहरा परिचय है। मेरे अंग अंग, मेरे रोम रोम, को उनके शरीर की गरमाहट का ज्ञान है। मेरे स्वप्न उनकी रूपावृत्ति के कुशल चित्तेरे हैं।

इन घासों में भावो, देखो, उनकी परछाई के सिवा कुछ उनमें भलवता है ? फिर भी तुम मेरे उनके परिचय की जानकारी चाहते हो ?

व सकुचान आयें, चाह निषटक चल आयें, तुम उन्हें आने देना। उनके प्रवेस के लिए महा किसी प्रकार के वीमा की दरकार नहीं है। कोई बानून वायदा उन पर लागू नहीं होता। उनकी बेखी में मन्दार के फूल और चप की कलियाँ ही चाह न हो उन्हें आने देना। आषाढ की भाति गहन मीन होठों पर धरे आयें तो भी उन्हें मत रोकना। शरदेन्दु-सा उनका मुखड़ा, केशों में गूँथे फूलों की भाँति, मुरका गया हो तो भी, बिना रोक्डोक के उन्हें चला घाने देना।

इतने पर भी तुम मेरे उनके परिचय की बात पूछते हो ?



य ग्रीष्म के दिन और पतझड़ की रात उन पर निछावर है जो समय
असमय मेरे मन के झरोखे में भाव भाक जाते हैं ।

यौवन की आधी में और बचपन की सौम्य ऋतु में, अभावों की
क्षतिपूर्ति के निमित्त उदारतापूर्वक सतत उत्सुक, अपन दवाधिदेव के चरणों में
अद्भानमित में बुधुमित वसन्त-श्री की अजलि अर्पित करती हूँ ।



मेरे गीतों की लय उनके स्तुतिगान से पवित्र हो चुकी है जिनका हिमाशु-शुभ्र कलेवर यर्षा-जल से निरंतर अभिसंचित होता है ।

दिवसना देवागनामों के रूप का भजन जिनके अपागों को स्निग्ध कर चुका है, मेरे ये सर्वस्वापहारी मेरी जिह्वा पर अपने हाथों से कविता के छन्द लिख गये हैं ।



मेरी अनकही बात सुनने के लिए व्यग्र मेरा सजन लौटकर आयगा कि नहीं ?

पागुन की चादनी रात रा मे पूछ रहा हूँ कि यह उसके उत्तरीय पर मेरे लिए सदश की कु कुम छिड़क गया है कि नहीं ?

दूर्वा के श्यामल अचल पर अकित उसके पदचिह्न बताते हैं कि वह किसी हडबडी में नदी-तट की ओर नौका की सोज में चला गया है ।

मेरी अनकही बात की रेशम-डोर से बँधा मेरा परदशी सजन लौटकर आयगा कि नहीं ?

एकादशी के व्रत और अमावस्या की कच्छ उपासना से कृश मेरा शरीर उसके गन्धोच्छ्वास के स्पर्श से सिहर रहा है ।

मेघो के साथ उडकर उसे खोजने की मेरी शक्ति निक्षेप हो चुकी है ।

मेरी अनकही बात का जादू उसे खीचकर लायगा कि नहीं ?



सहस्र मेगाटन बम का विस्फोट इस धराधाम को घूमिल कर देगा, उस समय कवि के छन्दों में जीवन-संगीत फूट पड़ेगा ।

गृष्टि का विधान घबस और विनाश के हाथों में नहीं कवि के स्वर-छन्दा में सुरक्षित है ।

अनन्त सौर-मंडलों के ब्रह्माण्ड में कवि की वाणी का प्रसाद वितरित होता है । सुपर बमों की क्षुद्र दहन-लीला से वह निर्भीक नहीं होगा ।

जीवन की झट्ट घारा में खडबिगास की उन्चाएँ जलकर बुझ जायेंगी । उनकी रेडियम घमिती महाकाल के चक्र के साथ भ्रमित होती हुई जीवन-संगीत के महासमुद्र में लीन हो जायगी ।

कवि के शसनाद में कला, दर्शन और विज्ञान की चरम उपलब्धियों का समन्वय होना है ।



ह परिवर्तन, तुम भ्राता मे जागो और प्राणा मे मुस्वराओ। तुम वियोग को मिलन के क्षणों मे बदल जाने दो। भ्रातृ को हँसी मे, उदासी को चाँदनी मे, धूल को फूल मे खिल जाने दो। जब मेरे जीवन-नाटक के वरुण दृश्य के बाद परदा उठे तो वासन्ती छटा के अरुणोदय का व्यापार चल पडे और मेरा शेष जीवन विधाता की श्रेष्ठ सुखान्त वृत्ति के रूप मे विश्वग्न यागार के शाश्वत नक्ष मे स्थान पाय।

यही मरी एव दुद्र-सी अभिलाषा है।



मेरा यह हृदय तुम्हारे चरणों में समर्पित है ।

इसमें रम धोलो चाहे विष इसका दान मैं तुम्हें कर चुका ।

इसमें विषाद भरु या उल्लास, यह तुम्हारी सपत्ति है ।

मैं तो इसकी घोर भाँस उठाकर भी नहीं देखूंगा ।

यह तार तार हो चाहे टुक टुक, मुझे इससे कोई सरोकार नहीं ।

केवल इतना ध्यान रखना कि यह तुम्हारे किसी चरणानुरागी का आहत हृदय है । न यह फूल है न रत्न, यह तुम्हारे शोक और शृंगार का नहीं, प्यार का उपकरण है ।



सरसों, अरहर और मटर के फूलों ने खेतों के उस अंचल में तितलियों का सागर सा लहरा दिया था। पगडंडी छोड़कर पयिक क्षणिक विश्राम के लिए वहां ठहर जाते थे, और जब कर्तव्य उन्हें बरबस खींचने लगता तो वे अपना हृदय वहीं छोड़ जाते थे।

आंखों में गुलाबी सपने भरे कृपक सुता खेतों में खड़ी हरी फसल की तन्मय भाव से रलवाली करती थी। कितने हृदय उसके चरणों में सिसकते पड़े हैं, इसका उसे न भान था न ज्ञान।

अचानक एक सायंबाल किशोर कवि उस रास्ते आ निकला। उसके काव्यालाप ने भोली किमान बन्धा के हृदय को चंचल कर दिया। वह काव्यधारा में विभोर हो गई। उसने धूल में सिसकते अतृप्त एवं व्याकुल हृदयों को एक एक कर उठाया और यथोचित सम्मान दिया।

उसने कवि के आगे नम्र अभिवादन कर कहा— देवता, इस नूतन दृष्टि-दान का ऋण कैसे उत्तरेगा ?

उत्तर मिला—उवाने पांव और कुंजारे हृदय मे प्रेम की डगर पर चल पड़ने से।



वह आया और बिना मिले चला गया, यह आया ही क्यों था ?
 परछाईया प्रकाश का आलिंगन किये बिना बच जाती हैं ?
 सीदामिनी को सिसपते छोड़कर मेघों का पलायन कहीं होता है ?
 सखि, वह मुझसे मिले बिना कैसे चला गया ?

किसी अज्ञात अपराध का दंड वह मुझे दे गया है ।

नदी की छलछलाती लहरें उस विपाद को अच्छी तरह व्यक्त नहीं
 कर पाती, जो मेरे तन मन में समाया है । मैंने बहुत यत्न से, एकान्त
 साधना द्वारा, उसका आह्वान किया था ।

वह आया और बिना मिले चला गया ।

मेरे हृदय-सरोवर में एक बार झक जाता, तो मैं नृतकृत्य हो जाती ।
 मेरे मानसकमल के सपुट में कहीं एक बार वह बंध जाता ।

नदी के कछारों की निर्जनता घनी हो गई है । तारक प्रसून अन्धकार
 के वृन्त पर से झडझडकर आलोक के हिमागार में सोबे जा रहे हैं । वह
 किधर गया है ? सखि, तू एक बार घर से बाहर जाकर उसकी खोज
 खबर तो ला ।

वह मिल जाय तो उसे उपालभ मत देना, न इतने तीखे स्वर में
 बोलना कि वह तेरी बातों में मेरे आग्रह के माधुर्य को न पा सके ।



मैं शब्द को पकड़कर अर्थ की खोज करता हूँ ।

रूपातीत रहस्य सकेत तक पहुँचने के लिए शब्द ही एकमात्र सहारा है ।

सूक्त, उस शब्दातीत सार को, अदृश्य के हाथों मथकर प्राप्त किया हुआ नवनीत है ।

वेदों की मन्त्र-योजना, शास्त्रों का शब्दविन्यास, उसी अमूर्त शब्द बोध की उपलब्धि के लिए हैं ।

तभी तो मैं शब्द को पकड़कर अर्थ की खोज करता हूँ ।

अर्थ, अर्थ, वस अर्थ में ही जीवन के श्रेय और प्रेय घुलकर एक रस हो पाये हैं ।



मेरी छोटी सी इच्छा है कि तुम अपनी बेगी में मंजुमालिका के समीप मुझे स्थान दो। शिक्षा, दीक्षा और अभिज्ञता शून्य मुझ जैसा आराधक और अधिक की आशा कैसे कर सकता है ?

तुम्हारे रूप के ऐश्वर्य के चारों ओर दर्शकों और उपासकों का मेला लगा है। मेरी उनमें कोई गिन्ती नहीं है, यह मैं जानता हूँ।

तुम्हारे मन्दिर की देहरी के भीतर महिमा का जो मंडप है, उस ओर कदम बढ़ाते मेरा हृदय अभिभूत होता है। मेरे अकिंचन व्यक्तित्व को तुम्हारे दया-दाक्षिण्य का ही भरोसा है।

तुम्हारी बेगी में मंजु मालिका के समीप जो छोड़ा सा स्थान रिक्त है, उसी पर मेरी लोलुप दृष्टि अटकी हुई है। तुम्हारी विशेष कृपा से ही मुझे वह स्थान प्राप्त होगा।



ओह, कितने मीठे हैं वियोग-तप्त वे अथु गीत !

एकांत में हृदय-वीणा पर करुण मधुर स्वरों में उनकी धुन आपही आप बज उठती है ।

आकाश में झिलमिलाते तारागण महाकाल के मंच पर गहरी आत्मीयता से उन्हें अंजलि दे देकर पूजते हैं ।

आकाशगंगा के तट पर मणिचूर्ण से खेलती हुई विवसना देवकन्याएँ उनकी स्वर-लहरी में इस प्रकार खो जाती हैं कि सप्तपियो की विमोहित दृष्टि से अपनी लज्जा निवारण का उन्हें ध्यान ही नहीं रहता ।

स्मृति-पटल पर मिलन क्षणों के जो अधमिटे पद-चिन्ह शेष हैं उनकी मादक वारुणी से ये गीत नशीले हैं, इनके स्वर-ताल में वसन्त की संध्या का वातावरण द्रव्य जाता है ।

इन गीतों की मिठास से कभी तृप्त न होनेवाला मन उनकी कड़ियों से मोती-लड़ें परोने में ही सुख मानता है ।



विगत, तुम्हारा रोम रोम पुलक और स्पन्दन से भरा है । तुम आज भी उतने ही तक्षण अक्षय और चंचल हो जितने दश-महस्र वर्ष पूर्व थे ।

फाल्गुनी गीतों की वादली पिये, नव पल्लवों की बोला पर झूलते हुए, परागसिक्त पुष्पशैया पर झपलेटे, तुम आज भी अपने कवि को उससे वासन्ती गीतों की झंगूरी मदिरा पिलाकर उन्मत्त बनाने या उससे अनुरोध करते हो, किन्तु कवि की वीणा के तार उतर चुके हैं । उसके गीतों में अनुराग की सिहरन के स्थान पर वृद्ध ज्ञान की घबलिया घिर आई है ।

कवि का नूतन पुरातन का कापाय धारण कर चुका है ।



आपाठ की मेघावृत्त रजनी में बकुल पुष्पो की शैया पर लेटी मैं
आकुल उसासों ले रही हूँ ।

वह कलान्त पगो से स्वर्ण पीत मुखड़ा लिए आया और वातायन के
नीचे वृक्षो की छाया तले धूल में बैठ गया ।

उसकी आखो की गहराई में प्रतिवेदन की कोई रागिनी बजती है ।

दीपहीन अन्धेरे कक्ष से मैं उसकी सकल आकृति को देखती और
उसके घायल हृदय की धड़कन को सुनती हूँ ।

मेरे हृदय में उसके लिए आश्वासनो की घटा उमड़ रही है, किन्तु
मैं नहीं जानती कि कैसे उसे उससे परिचित कराऊँ ?

अपनी उसासो का निर्माल्य इसी वातायन के मार्ग से मैं उसके पास
प्रेयित करने के लिए आतुर हूँ ।

मेरी लज्जा की गोपनीयता का निर्वाह करते हुए कौन मेरे सीमन्त
का सिन्दूर उसके चरणो तक पहुँचा देगा ?



मैं तो कविता के छन्दों में डूबा था ।

तुम अन्धकार रूयी पक्षी के पक्षों में छिपकर कब मेरे कदम में आ गये, मैं नहीं जान पाया ।

मैं तो अपनी कविता के छन्दों में डूबा था ।

बहुत लंबे ऊपा ने पूर्व द्वार की साबल खटखटाई और अन्धकार का पक्षी पश्चिम द्वार से पल खोलकर उड़ गया । तुम जैसे उसके पक्षों में छिपकर आये थे वैसे ही छिपकर चले गये, पर मैं जान न पाया ।

तुम्हारे पावों का अलक्तक कुसुमशैया पर तुम्हारी पद छाप छोड़ गया है, उससे तुम्हारी उपस्थिति का रहस्यभेदन होता है ।

अब मैं तुम्हारी स्मृति को सतर्कता के साथ गीतों की कड़ियों में बाँध कर रख रहा हूँ ।



तेरे एक कटाक्ष ने तेरा मेरा परिचय कराया था ।

तेरे उस अयाचित संकेत वा अर्थ विन्तु आज तक मरी समझ में नहीं आया ।

वर्षों के माप से, समय का कितना नीर बह गया पर तेरा वह दृष्टिदान भुठनाया न जा सका । उसकी रेखाएँ मेरे स्मृति पटल पर उत्तरोत्तर उभरती गई हैं ।

अनेक बार मैंने सोचा कि विस्मृति के तलपर मैं उसे बंद करके निश्चित हो जाऊँ, परंतु पराकासनी ब्रह्माण्ड किरणों की भाँति वह समस्त बाधाओं को पार करके अदृश्य रूप से मेरे पीछे लगा रहा ।

मैं आज भी सोचता हूँ कि एक अनचीन्हे बटोही को निमित्त भर की दृष्टि के शाश्वत बधन में बाधने में तेरा कौनसा स्वार्थ पूरा हुआ ?

हा, मेरा इतना अपकार अवश्य हुआ कि मैंने यत्नपूर्वक मनकी मनोरम मजूपा के प्रमुख आराधना कक्ष में उसे ही संजोकर रक्खा है । किसी अन्य को यह सौभाग्य प्राप्त नहीं होने दिया है ।



मृत्यु को जीवन से कितना प्यार है ।

उसकी खोज में बेघारी के पैरों को विराम नहीं है । वह जहाँ पाती है उसे गोद में ले लेने की ललक उठती है ।

घोर जीवन— वृत्तघ्नता का अवतार, उससे भागा भागा फिरता है । वह उसकी घोर आल चठाकर भी नहीं देखना चाहता । वह ग्लानि, भय और उपेक्षा से ही उसका सत्कार करता है ।

मृत्यु ही है जो इतने पर भी उसके लिए दुलार की सीगात लिये डोलती है !



-

हे महाकाल, क्या तुम बता सकते हो कि तुम्हारे चरणचिन्ह कहां कहा प्रकित नहीं हैं ?

जम्मिल सागरों के वधा पर, संकत-मुलिनों की घमनियों में, आग उगलते ज्वालामुखियों के अन्तराल में, हिमघबल गिरिशृंगों पर, आकाश में बिखरी अनन्त नक्षत्रमाला के बीच, भ्रूगर्भ में अंगड़ाई लेती हुई चट्टानों पर सीमन्त रेखा की भांति तुम्हारे पगों की छाप किन शाश्वत हाथों द्वारा सगाई गई है ?

कोई ऐसे कण नहीं, कोई ऐसे अणु नहीं, कोई प्रसरेणु नहीं, जिनके सोपानों पर तुम्हारे विचरण में बाधा पड़ती है ।

तुम्हारी गति विलक्षण है, तुम्हारी चाल द्रुत-अमंद है । इस अनित्य, अस्थिरजगत में केवल मात्र तुम्ही नित्य, स्थिर और सर्वव्याप्त हो ।

तुम्हारे चरणों में महाकवि के गीत अविनश्वरता की उपलब्धि के लिए एक एकान्त शान्त कोना खोज रहे हैं ।



कदाचित्त तुझे मरी याद हो ।

मैं तेरे लिए अप्राप्य थी पर तू मेरे लिए विभोर ।

लोक लज्जा की ऊँची ऊँची दीवारों के छिद्रों से तू ताकभाक करता था ।

मैं रेशमी सपनों के कशीदे बँठी चुनती रहती थी ।

किसी ने नहीं देखे हैं वे घाय जो इस बीच तेरी दृष्टि के नुकीले बाणों ने मेरे हृदय में बना दिये हैं ।

तू मुझे नहीं पा सका, पासकने का कोई सुयोग भी नहीं था, पर मैंने तेरा बहुत कुछ पा लिया है ।

मेरे हृदय के खेत में वह अमरवेलि की तरह छा गया है ।

तेरा वह खेल, मेरे जीवन का सर्वस्व, वेदना के आसुओं से आज भी अभिषिक्त हो रहा है ।

कदाचित्त तुझे मरी याद हो ।



हे महेश्वर, यह तुम हो कि मैं हूँ, या हम दोनों ही हैं ?

परन्तु तुम मूव हो और मैं बधिर हूँ ।

भला, मेरी जिज्ञासा का उत्तर षीन देगा और मुने समझेगा उसे कौन ?

तो क्या हम दोनों के अतिरिक्त किसी तीसरे का भी अस्तित्व संभव है ?

महेश्वर मैं तुम्हें ही पूछता हूँ— तुम्हे ही, बेचल तुम्हे ही ।



ओ मेरे नाविक, तू इस जर्जर नौका को खे चल ।

पूरे एक सवत्सर के उपरा त तेरा मेरा मिलन हुआ है ।

पाल विहीन नौका के अग्रभाग में मैं निर्दिष्ट होकर बँठी हूँ ।

तू दिशाहीन निस्तरंग निस्सीम जलधि में अनजाने क्षितिज की ओर नौका को खे चला ।

अतल अकूल जलराशि की निस्तब्ध शीतलता में हम दोनों खो जायें,
एक हो जायें ।

नि स्वन सगीत से आकुल रागिनी का कठ विगलित हो उठे ।

नाविक, तू एक मत,

डाढो और पतवारो के बिना ही तू नौका को खे चल ।



संयोग के लिए हम आकुल थे, परन्तु उसमें क्या है ?

वियोग प्रतिफल नूतन संभावनाओं को लिये नृत्पशील है ।

अष्टग्रहों के योग की भांति सयोग के क्षण आकाशा रहित गति से
बीत गये हैं ।

वियोग के दुर्लभ क्षितिज का व्यापक विस्तार संगीत के विविध स्वरो
से भंगृत है ।



हृदय के पनघट पर कोई परदेशी आकर बैठ गया है ।
 मेरे छलकते स्वर्णकलश से दो चुल्लू पी लेने की उसकी तकरार है ।
 देवाचन के लिए मनोनीत मेरे घट को उसकी ओर कैसे ढरकाऊँ ?
 उसकी इसरार चल रही है और मेरा इनकार प्रस्तुत है ।
 मध्याह्न का सूर्य आकाश में नीचे लटक गया है ।
 उसका आग्रहपूर्ण हठ किन्तु द्विगुणित होकर घुष्ट हो उठा है ।
 पतिहारिनें हँसती और इठलाती हुई घड़े ले लेकर चल पड़ी हैं ।
 मेरे आंचल का छोर परदेशी के हाथ में है, और संध्या की छाया में
 मैं अपनी काया में समायी जा रही हूँ ।



मैं सुख की खोज में निकला था ।

आज लम्बी जीवन यात्रा पूरी करके भी लग रहा है कि मेरी खोज
अपूर्ण ही रही है ।

परन्तु तुम विश्वास दिलाते हो कि सुख का सागर मेरे पार्श्व में ही
सहराता है ।

तो क्या मैं अपने जन्म को सफल और जीवन को सार्थक समझूँ ?



चन्द्र-दर्पण में रात्रि अपनी मुखच्छवि निहार रही है ।

आकाश गंगा के तट पर देवायनाग्रो के पायल वज उठे हैं ।

कवि का अन्तर्बह्य शीत किरणो से भाव विजडित गीत-ग्रथिया खोलने में संलग्न है ।

निनिमेष नयनो से कुसुम, कलियो की कौमार्य छलना में, अपने बीते दिनो का प्रतिबिम्ब देख रहे हैं ।

मेरे लिए पर-नु यह सत्तार नि श्वात्त, वेदना और व्यामोह में डूबा हुआ है ।



अतीत के तट पर अवस्थित कलाविद् भविष्य के क्षितिज पर अजस्र रेखाएँ उरेह रहा है ।

आकाश की नील शुभ्र विस्तीर्णता पर रेखावृत्तियों की लिपि एक सजीव अभिव्यजना है ।

परिश्रान्त हृदय की व्यथित भावना नि स्वन नदी की हिम शीत धारा में नहा रही है ।

प्राणों के मणिद्वीपों में सुवर्ण का स्नेह जल रहा है ।

हे भुवनेश्वर, तुम निसर्ग की इन कला-वृत्तियों को अमर जीवन प्रदान करो ।

हे जीवन और जगत के स्वामी, तुम अपने पावन करो से अचला मूर्ति में चपला का स्पन्दन धोल दो ।

कलाकारकी कला, तुम्हारे स्पर्श से, सजीव सृष्टि का उपादान बन निरन्तर नूतन को जन्म देती रहे ।



मेरी पलकों को आद्र कर रहा है उसे मैं किस नाम से अभिहित करूँ ?

अतीत का उसमें स्पर्श है, वर्तमान की उसमें सिहरन है, भविष्य का उसमें ज्वार है ।

मेरे हृदय का मोती गल गलकर बहा जा रहा है ।

कनिष्ठा के प्रति मेरी अनुदक्ति का समय इतिहास अपने ओठों पर लिये वह दाखल जीवन की कविता का लय शुक्त छन्द है ।



यही मृत्यु है !

मृत्यु मिटाती चलती है, रोदता चलती है। वह अच्छे बुरे की छोटनी नहीं करती। उसके हेतु सब समान हैं, नगण्य हैं। हेय है, कुचल डालने योग्य !

परन्तु जीवन, वह मृत्यु से कही अधिक बलिष्ठ और उर्वर है। वह मृत्यु को पद पद पर चुनौती देता है। उसके मिटाये वह नहीं मिटता। उसके मंङ्कुर तो निरन्तर फूटते ही रहते हैं।

मृत्यु की विनाशलीला पर विद्रूप हँसी हँसता हुआ जीवन कुसुम अपने पराग को सुवास से दिग्दिगंत को सुवासित करता ही रहता है।

उस अविनश्वर जीवन को प्यार करनेवाला, इस द्वन्द्व का दृष्टा, क्रान्तदर्शी कवि मृत्यु को नमन क्योंकर कर सकता है ? उसका प्रणाम तो विजेता के चरणों का स्पर्श करने के लिए ही है !



मैं कविता की पक्तियों में खोया था ।
 उदास सध्या न जाने कब दबे पाव मेरे शयनकक्ष में घुस आई ?
 चुपचाप आहटहीन उसके आगमन की प्रतीति मुझे हुई जब मुखर
 दीप्त अन्तिम त्रिरण सहसा खुले झरोखे से लुप्त हो गई ।
 सकुचाई सहमी एकाकी सुरमयी सध्या पर मेरी दृष्टि अटक कर
 रह गई ।

कविता की भूली पक्तियों की उपलब्धि से सुन्दर और शांतिदायक
 उसकी निविड श्यामल काया ने सौंदर्य की अपूर्व छटा से मेरे मन को
 विमोघ्य कर दिया ।
 आत्मविभोर हम दोनों एक दूसरे के हृदय में ताकते रहे, भाकते
 रहे !



नीद जाग जाग उठती है ।

निस्तब्धता कुररी बनी वनस्थली का शान्ति का हृदय चीर रही है ।

भांसू रोते हैं, निर्मोही मन किन्तु आज पत्थर हो बैठा है ।

परीक्षा, यही मेरी कठिन परीक्षा है ।

मन का संशय कहता है, मुझ अगर्णा को युग युग पर्यन्त अपने वरेष्य का वियोग ही बदा है ।

चन्द्र किरणें पून-कलियो पर पड़ी पड़ी कुम्हला गईं ।

घोस पत्तियों पर ही सूस गईं ।

तारों की झिलमिल छाया लहरों में डूब गई ।

मुझ मानवती का मान भंग करने मेरा चन्द्रसेखर नहीं आया, नहीं आया ।

मेरी प्रतीक्षा की रात इतनी लम्बी है,— ग्राह, इतनी लम्बी कि बस मठ पूछो ।



गीतों से उसके घोंठ गीले थे ।

छन्दों से उसकी वाणी विगलित थी ।

आसुओं की ऊँचापिपे वह पथराई आसों से क्षुण्ण क्षितिज के तट पर
किसी के पद-चिन्हों को खोज रही थी ।

भावों की फूलशैया छोड़कर उसके प्यार का पछी किसी अज्ञात लोक
की ओर व्याकुल उड़ा जा रहा था ।

लोकान्तर में मिलन की आशा से उसकी श्वास श्वास आश्वस्त भले ही
हो, परन्तु उसका सशयालु मन चलदल की भाँति डोल रहा था ।



तुम कहते हो यह मुक्ति मार्ग है ।

मुक्ति का लाभ मुझे नहीं लेना है यदि तुम्हारी मंगलमूर्ति के दर्शनों का आश्वासन हो ।

कर्म लिप्त मुझे रखो परन्तु अपनी दृष्टि के सामने ।

पापपंक मेरे लिए क्षीरसागर से धोष्ठ और सुखकर हो, यदि वह तुम्हारे चरणों के समीप हो ।

इस संसार में क्या तो त्याज्य है और क्या विस्मरण योग्य इसका निर्णय मेरे हृदय से कराना हो तो वह घोर असमंजस में पड़ जायगा और भ्रन्त में उसका निर्णय तुम्हारे मनोनुकूल न होगा ।

तुम मुझे निवृत्ति की ओर न ठेलो । उधर जाना तुम्हारे चरणों से दूर होना है ।

सूनी गलियों में न भटकने का ईने संकल्प किया हुआ है मेरे प्राराध्य ! नरमुडों के महारण्य में, कंठों के कोलाहल के बीच, कर्मरत जीवन की रेलपेल में तुम्हारी उपलब्धि की तुलना किसी देवी वरदान से कम नहीं है ।



✓ शून्य एकान्त के निविड अन्धकार में मैं तुम्हारी मुखच्छवि देख न पाया परन्तु मैं जान गया कि तुम्हारा लावण्य अनुपम है।

दीप हीन मेरे कक्ष में तुम्हारे स्पर्श की स्निग्ध कोमलता ने तुम्हारे अपरूप सौंदर्य की छटा को मेरे मन पर सहज स्पष्टता से अंकित कर दिया।

मैं नहीं चाहता कि प्रभात के आलोक में अथवा ज्योत्स्ना के क्षीर-सागर में अवगु ठन का निवारण कर कौतूहल पूर्वक तुम्हारे लज्जारुण रूप को देखने का हठ करूँ जबकि आत्मा के दर्पण में तुम्हारा प्रतिबिम्ब बदी बनकर समाया हुआ है।



मेरे विश्वासो की भूमि पर हल मत चलाओ, मेरे भोले कृपक !
 उसे खाद, पानी और बीज कुछ नहीं चाहिए। वह तो निसर्गतः
 र भूखंड है।

अविश्वस्त ऊसर खेतों की इस व्यापक विश्व में तंगी नहीं है।
 आस्था की उन निजल मरुभूमियों का पता तुम्हें बिना खोजे ही चल
 पगा, इतनी बहुतायत है उनकी।

मेरे पास तो एक छुद्र क्षेत्र का पट्टा भर है परन्तु मुझे उस पर सच्चा
 भ्रमान है !



मेरे प्रेम, तू विहम्बनाओं से व्याकुल रहा है ।

तू सशय के विष ज़ाणों से पोर पोर विधा है ।

तूने सकटों के पथ में विचरण कर अपने हृदय को क्षतविक्षत किया है ।

निरावरण होने पर तुझे भुवन में मुँह छिपाने की ठौर नहीं मिला ।

पाप के साथ तुझे एक आसन पर बिठाने में ईर्ष्या और द्वेष निरन्तर प्रयत्नशील रहे हैं ।

तो भी, तो भी तू भाग्यवान है ।

कला, साहित्य और शिल्प में सदा तेरा देवार्चन हुआ है ।

दर्शन और सद्बिचारों में फिर फिर तेरी आरती उतारी गई है ।

शांति और सद्भावनाओं में प्रथम यज्ञभाग का तू अधिकारी बना है ।

इस विश्व में तू सर्वाधिक निन्दित और सर्वाधिक बधित रहा है मेरे

प्रेम !



तुम्हे एकात्म रूप से आत्मसात करने का मोह तो है परन्तु तुम सबके ही यह सोचकर परास्त होना पड़ता है ।

मेरे हृदय के पार्श्व में तुम्हारा निवास है परन्तु तुम उनके भी तो इतने ही समीप हो ।

मेरे पास गवने करने के लिए केवल इतना है कि मैं तुम्हारे रहस्यपूर्ण सम्बन्धों से परिचित हूँ ।

तुम्हारा अधिकांश इस प्रकार वितरित है कि तुम्हारे सर्वांग पर अधिकार जताने के लिए हर कोई प्रस्तुत है ।



हे अन्तर्यामी, तुम आओ चाहे न आओ,
 तुम्हारी अनुकंपा का सदेश पहुँच गया है ।
 हे घट घटवासी, तुम देखो चाहे न देखो,
 तुम्हारे दृष्टिदान के भिखारी को उसका प्राप्य मिल गया है ।
 हे करुणानिधान, अज्ञात कुलसील तुम्हारी स्नेह-सरिता
 मेरे अशान्त आकुल मानस सिन्धु से आ मिली है ।
 तीन लोक चौदह भुवनो की अतृप्त वासनाएँ
 आतप्त आवेश के साथ नाच उठी हैं ।
 उच्छ्वसित शिरा त-तुम्रो म
 आह्लाद का उत्स फूट पडा है ।
 मैं मुग्ध दृष्टि से इस मनहोनी घटना का
 मूक साक्षी बना मूर्तिवत् विजडित खडा हूँ ।

मैं अपनी प्राणों का नैवेद्य लेकर आया हूँ,
 तुम केवल गंध पुष्प के अभिलाषी हो ।
 देवाधिदेव, तुम्हारे चरणों में अर्पित करने के लिए
 अनुरजित जीवन क्षणों की रत्न मजूपा ही मेरा सर्वस्व है ।
 कुसुम-पराग द्रुम पल्लवों के प्रत्याशो तुम यत्किञ्चित् आस्था वा
 यह निर्मल्य चरणों के अग्रभाग में स्पर्श कर स्वीकार करो ।
 श्रान्त बलान्त मेरा मन, उपाकाल के कमलवन की भाँति
 तुम्हारे नयनों के नीलाचल में विकसित हो उठे ।



सत्यशोध के प्रयत्न में मेरा असत्य से साक्षात्कार हुआ ।

उसके संघर्ष में मैं इतना रम गया कि सत्य से मिलने पर उसे पहचान भी न सका ।

त्रिकालाबाधित सत्य कितना रुक्ष, कितना वृद्ध, कितना झुर्रियोवाला होगा यही सोचते सोचते मैं उसके इंगित का तिरस्कार करके चला आया ।

चिरयौवन की सपना से विभ्रूपित सौम्य सत्य को वरण करने से मैं सदा के लिए वंचित हो गया !



